



क्षमा शर्मा की रचना “अष्टावक्र गीता” के आठवें प्रकरण में मानवीय व्यवहार और जीवन-बोध के संदर्भ पर समकालीन साहित्यिक विवेचन

Dr. B. Laxmi, Associate Professor

Head of the Department of Hindi

Dr. V. S. Krishna Govt. Degree College (A) Visakhapatnam

Mail ID -buddhalaxmidex77@gmail.com

भारतीय दार्शनिक परंपरा में अष्टावक्र गीता वह वेदांत है जिसमें आत्मज्ञान और मोक्ष की अवधारणाओं को अत्यंत सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत किया गया है। अष्टावक्र गीता में मनुष्य के बंधन और मुक्ति का संबंध उसके चित्त की वृत्तियों से स्थापित किया गया है। इच्छा, शोक, ग्रहण, त्याग, हर्ष, क्रोध तथा विभिन्न दृष्टियों के प्रति आसक्ति को मानसिक बंधन का आधार माना गया है।

अष्टावक्र गीता पूर्वाग्रह की मान्यातओं का त्याग है। यह ग्रंथ खुलेआकश में निर्मल ध्यान की गहराई है। अष्टावक्र गीता में ज्ञान कैसे प्राप्त होता है? मुक्ति और वैराग्य कैसे शुरू होता है? आदि का विवरण है। ज्ञानी सरल होता है और उसका चित्त निर्मल होता है। अष्टावक्र गीता में बताया गया है कि विषयों को विष की तरह छोड़ना उचित है। क्षमा, सरलता, दया, संतोष, और सत्य को अमृत की तरह ग्रहण करना चाहिए। क्षमा क्रोध का अमृत रूप है। सरलता, कुटिलता रूपी विष का अमृत रूप है। दया, कठोरता और क्रूरता का अमृत रूप है। संतोष, असंतोष का अमृत रूप है। सत्य, असत्य का अमृत रूप है। असंतोष हमारी चाह से पैदा होता है और यही चाह हमारे जीवन को रचता है।

अष्टावक्र कहते हैं - मनुष्य ना पृथ्वी है, न जल, न वायु, न अग्नि, न आकाश, मनुष्य मात्र दृष्टा है। मनुष्य यदि अपनी देह से अलग होकर चैतन्य में रुक जाए तो उसी क्षण शांत, सुखी और मुक्त हो जाएगा। दुनिया हमेशा ऐसे लोगों की आलोचना करती है जो भीड़ से अलग रास्ता चुनते हैं। सत्य को हमेशा संदेह का सामना करना पड़ता है। जिनमें जानने और समझने की चाह नहीं होती वे आलोचना करने लगते हैं और अविश्वास से ही आलोचना का जन्म होता है। क्षमा शर्मा की रचना के संदर्भ में अष्टावक्र का 8वाँ प्रकरण केवल आध्यात्मिक विमर्श न रहकर मानवीय व्यवहार, संबंधों, अपेक्षाओं, अहंकार, मानसिक तनाव और जीवन-बोध की व्याख्या का आधार है।

मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी जिज्ञासाओं में से एक है—मनुष्य दुखी क्यों होता है? और वह आंतरिक शांति कैसे प्राप्त कर सकता है? भारतीय दर्शन ने इस प्रश्न का उत्तर अनेक दृष्टियों से दिया है। उपनिषदों ने आत्मा और ब्रह्म के संबंध को समझाया, भगवद्गीता ने कर्म, ज्ञान और भक्ति का समन्वय प्रस्तुत किया और अष्टावक्र गीता ने आत्मस्वरूप की पहचान तथा मानसिक आसक्ति से मुक्ति को केंद्र में रखा है। अष्टावक्र गीता के आठवें प्रकरण का विषय विशेष रूप से मनुष्य के मन और उसके बंधन से संबंधित है। उपलब्ध पाठ-स्रोतों में यह आठवाँ प्रकरण ‘मोक्ष-लक्षण या बन्धन-मुक्ति’ से संबद्ध अध्याय के रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकरण की विशेषता यह है कि इसमें बंधन को केवल बाहरी परिस्थितियों से नहीं जोड़ा गया, बल्कि मन की इच्छा, शोक, आकर्षण और द्वेष जैसी प्रवृत्तियों से



जोड़ा गया है। इसीलिए अष्टावक्र गीता का अध्ययन आधुनिक मानवीय व्यवहार को समझने के लिए भी उपयोगी प्रतीत होता है। क्षमा शर्मा की रचना के संदर्भ में यह विचार और अधिक प्रासंगिक हो जाता है, क्योंकि साहित्य मनुष्य के मानसिक संघर्षों को संवेदनात्मक रूप में सामने लाता है। दर्शन जिस सत्य को सूत्र के रूप में कहता है, साहित्य उसे जीवन, संबंध और पात्रों के माध्यम से अनुभव कराता है।

अष्टावक्र गीता का आठवाँ प्रकरण

बंधन और मुक्ति - आठवें प्रकरण का आरंभ अत्यंत महत्वपूर्ण श्लोक से होता है—

तदा बन्धो यदा चितं किञ्चिद् वाञ्छति शोचति।

किञ्चिन् मुञ्चति गृह्णाति किञ्चिद्धृष्यति कुप्यति॥ 8.1॥

अर्थात् जब मनुष्य का चित किसी वस्तु की इच्छा करता है, किसी बात पर शोक करता है, किसी वस्तु को छोड़ता या ग्रहण करता है, प्रसन्न या क्रोधित होता है, तब उसका चित बंधन की अवस्था में रहता है। इसके अगले श्लोक में इसके विपरीत स्थिति कही गई है—

तदा मुक्तिर्यदा चितं न वाञ्छति न शोचति।

न मुञ्चति न गृह्णाति न हृष्यति न कुप्यति॥ 8.2॥

यहाँ मुक्ति का अर्थ बाहरी संसार को छोड़ देना नहीं, बल्कि चित की उस आसक्ति से मुक्त होना है, जो व्यक्ति को निरंतर प्रतिक्रिया देने के लिए बाध्य करती है। आधुनिक मनुष्य के जीवन में इसका उदाहरण सहज रूप से देखा जा सकता है। किसी व्यक्ति की प्रशंसा मिलने पर अत्यधिक प्रसन्न होना और आलोचना मिलने पर अत्यधिक दुखी हो जाना—दोनों स्थितियों में मन बाहरी प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है। मुक्ति अर्थात् बाहरी आसक्ति से मुक्त होना है।

इच्छा और मानवीय व्यवहार - मानवीय व्यवहार की मूल प्रेरणाओं में इच्छा का विशेष स्थान है। मनुष्य चाहता है कि उसे सफलता मिले, सम्मान मिले, संबंधों में प्रेम मिले और समाज उसे स्वीकार करे। इच्छा स्वयं जीवन का सम्मोहन या त्याग नहीं है, समस्या तब उत्पन्न होती है जब इच्छा व्यक्ति की मानसिक स्वतंत्रता को नियंत्रित करने लगती है। भगवद्गीता में भी कामना और क्रोध के संबंध को स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

“काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।”

अर्थात् कामना की तीव्रता से उत्पन्न असंतोष और क्रोध मनुष्य की मानसिक अवस्था को प्रभावित करती हैं। अष्टावक्र का दृष्टिकोण इससे आगे जाकर चित की संपूर्ण आसक्ति को देखने का आग्रह करता है। इस प्रकार भगवद्गीता और अष्टावक्र गीता दोनों में मनुष्य के भीतर की वृत्तियों और उसके व्यवहार के बीच एक गहरा संबंध दिखाई देता है। क्षमा शर्मा की रचना के संदर्भ में इसे मानवीय संबंधों की अपेक्षाओं से जोड़ा जा सकता है। जब व्यक्ति किसी संबंध से निश्चित व्यवहार की अपेक्षा करता है और वह अपेक्षा पूरी नहीं होती, तो दुख, क्रोध या निराशा उत्पन्न होती है। बाहरी घटना से उस घटना के प्रति मनुष्य की मानसिक प्रतिक्रिया अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

आसक्ति और मानसिक बंधन - आठवाँ प्रकरण - तदा बन्धो यदा चितं सक्तं कास्वपि दृष्टिषु।

तदा मोक्षो यदा चित्तमसक्तं सर्वदृष्टिषु॥ 8.3॥



अर्थात् किसी विशेष दृष्टि या विचार से चित का चिपक जाना बंधन है और सभी दृष्टियों के प्रति अनासक्त होना मुक्ति की दिशा है। यह विचार आज के सामाजिक जीवन में विशेष महत्व रखता है। मनुष्य अक्सर अपनी राय को अंतिम सत्य मान लेता है। परिवार में, कार्यस्थल पर, सामाजिक जीवन में और वैचारिक चर्चाओं में “मेरी बात ही सही है” का आग्रह संघर्ष को जन्म देता है। अनासक्ति का अर्थ विचारहीन होना नहीं है। इसका अर्थ है—अपनी धारणा को पहचानना और आवश्यकता पड़ने पर उसे पुनः देखने की क्षमता रखना। यही मानसिक लचीलापन स्वस्थ मानवीय व्यवहार का आधार बन सकता है।

‘मैं’ और अहंकार -आठवाँ प्रकरण—

यदा नाहं तदा मोक्षो यदाहं बन्धनं तदा।

मत्वेति हेतुया किञ्चिन्मा गृहाण विमुञ्च मा॥ 8.4॥

यहाँ ‘अहं’ को बंधन के केंद्र के रूप में देखा गया है। मानवीय जीवन में अहंकार अनेक रूपों में दिखाई देता है—

- मेरी बात मानी जाए।
- मुझे सम्मान मिले।
- मेरी उपेक्षा न हो।
- मेरे विचार को श्रेष्ठ माना जाए।
- मुझे दूसरों से कम न समझा जाए।

ये सभी भाव जब अत्यधिक तीव्र हो जाते हैं तो व्यक्ति का व्यवहार प्रतिक्रियात्मक हो जाता है। क्षमा शर्मा की रचनात्मक दृष्टि के संदर्भ में यह बिंदु महत्वपूर्ण है, क्योंकि साहित्य में पात्रों के बाहरी संघर्ष के पीछे प्रायः उनका आंतरिक ‘मैं’ सक्रिय दिखाई देता है। संबंधों में दूरी कई बार परिस्थितियों से कम और अहं की कठोरता से अधिक पैदा होती है।

पतंजलि योगसूत्र और मानसिक वृत्तियाँ - पतंजलि योगसूत्र का प्रसिद्ध सूत्र है— **“योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।”** योग को चित की वृत्तियों के नियंत्रण की अवधारणा के रूप में परिभाषित किया गया है। अष्टावक्र गीता का आठवाँ प्रकरण भी चित की इच्छा, शोक, हर्ष, क्रोध और आसक्ति की ओर ध्यान आकर्षित करता है। हालाँकि दोनों ग्रंथों की दार्शनिक पद्धति और भाषा अलग है, फिर भी दोनों में मन की अवस्था और मनुष्य की मुक्ति के बीच संबंध स्थापित होता है। आधुनिक मनुष्य के लिए यह संदेश विशेष उपयोगी है। तनावपूर्ण परिस्थिति में तुरंत प्रतिक्रिया देने के बजाय यदि व्यक्ति अपनी मानसिक स्थिति को पहचान सके, तो उसका व्यवहार अधिक संतुलित हो सकता है।

भगवद्गीता और स्थितप्रज्ञ की अवधारणा - भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय में स्थितप्रज्ञ का वर्णन करते हुए कहा गया है— **“दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः”**, यहाँ सुख-दुख में संतुलन की भावना दिखाई देती है। अष्टावक्र गीता के आठवें प्रकरण में भी इच्छा, शोक, हर्ष और क्रोध से परे चित की अवस्था की चर्चा है। इस प्रकार दोनों ग्रंथों में एक महत्वपूर्ण जीवन-मूल्य सामने आता है—**बाहरी परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना आंतरिक संतुलन विकसित करना।**

कबीर साहित्य में अनासक्ति - हिंदी साहित्य में कबीरदास ने भी बाहरी आडंबर और मानसिक मोह पर तीखा प्रहार किया। कबीरदास का प्रसिद्ध दोहा है— **“माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर।”**



Cover Page



यहाँ बाहरी क्रिया से अधिक मन के परिवर्तन को महत्व दिया गया है। अष्टावक्र की दृष्टि में भी वास्तविक परिवर्तन चित के स्तर पर होना चाहिए। इस दृष्टि से कबीर और अष्टावक्र दोनों का साहित्य व्यक्ति को बाहरी दिखावे से हटाकर आत्मचिंतन की ओर ले जाता है।

प्रेमचंद और मानवीय व्यवहार - प्रेमचंद का कथा-साहित्य भारतीय समाज के मानव जीवन का अत्यंत व्यापक चित्र प्रस्तुत करता है। गोदान में होरी की उम्मीदें, सामाजिक परिस्थितियों का दबाव और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ उसके जीवन को प्रभावित करती हैं। होरी केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक अपेक्षाओं और आर्थिक-सामाजिक परिस्थितियों से घिरे सर्व-साधारण व्यक्ति के रूप में समाज का प्रतिनिधि बन जाता है। अष्टावक्र गीता की दार्शनिक प्रस्तुतिकरण में मनुष्य के बाहरी संघर्ष के साथ-साथ उसकी इच्छाएँ, भय और सामाजिक मान्यताएँ भी उसके जीवन को संचालित करती हैं। यहाँ दर्शन और साहित्य एक-दूसरे के पूरक दिखाई देते हैं।

महादेवी वर्मा और अंतर्मन - महादेवी वर्मा के साहित्य में अंतर्मन की वेदना, खालीपन, आत्मसंवेदना और करुणा की गहरी अभिव्यक्ति मिलती है। उनकी रचनाओं में बाहरी संसार की घटनाओं के साथ मानव जीवन के भीतर उत्पन्न होने वाली आंतरिक अनुभूतियाँ विशेष महत्व रखती हैं। अष्टावक्र का दर्शन जहाँ मन को उसके बंधनों से पहचानने की प्रेरणा देता है, वहीं महादेवी का साहित्य मन की सूक्ष्म संवेदनाओं को अभिव्यक्ति देता है। इस दृष्टि से दोनों को साथ पढ़ने पर भारतीय साहित्य में 'अंतर्मन' की महत्ता और स्पष्ट होती है।

क्षमा शर्मा की रचना के संदर्भ में मानवीय व्यवहार - क्षमा शर्मा की रचना को अष्टावक्र गीता के आठवें प्रकरण की दार्शनिक दृष्टि से पढ़ने पर मानवीय व्यवहार की कई परतें खुलती हैं। मनुष्य के संबंध केवल प्रेम पर ही आधारित नहीं होते, उनमें अपेक्षा, अधिकार, असुरक्षा, आत्मसम्मान, सामाजिक दबाव और भावनात्मक निर्भरता भी शामिल होती है। इसलिए किसी व्यक्ति के व्यवहार को केवल बाहरी घटना के आधार पर समझना ठीक नहीं है। उसके भीतर सक्रिय मनोवैज्ञानिक कारणों को भी समझना आवश्यक है। यही साहित्य की शक्ति दिखाई देती है। साहित्य हमें यह देखने की क्षमता देता है कि—
जो व्यक्ति बाहर से कठोर दिखाई देता है, उसके भीतर कोई पीड़ा हो सकती है; जो व्यक्ति क्रोधित दिखाई देता है, उसके भीतर कोई अपूर्ण अपेक्षा हो सकती है; और जो व्यक्ति अत्यधिक अधिकार जताता है, उसके भीतर खोने का भय हो सकता है। अष्टावक्र गीता का दर्शन इन भावनात्मक प्रतिक्रियाओं के पीछे स्थित आसक्ति और 'मैं' की भावना की ओर संकेत करता है।

जीवन-बोध और वर्तमान समाज - आज का जीवन प्रतियोगिता, उपलब्धि और तुलना से प्रभावित है। सोशल मीडिया के युग में व्यक्ति दूसरों के जीवन से अपनी तुलना करता है। सफलता को बाहरी उपलब्धियों से मापा जाता है। ऐसे वातावरण में अष्टावक्र गीता का आठवाँ प्रकरण एक महत्वपूर्ण आत्मचिंतन प्रस्तुत करता है—

क्या मेरी खुशी वास्तव में मेरी है या वह दूसरों की स्वीकृति पर निर्भर है?

क्या मेरी असफलता मेरे संपूर्ण व्यक्तित्व का प्रमाण है?

क्या संबंधों में मेरा प्रेम है या केवल अपेक्षा?

क्या मेरी राय विचार है या अहंकार का आग्रह? ये प्रश्न जीवन-बोध को गहरा बनाते हैं।



Cover Page



मानवीय व्यवहार के लिए पाँच जीवन-सूत्र - अष्टावक्र गीता के आठवें प्रकरण से पाँच प्रमुख जीवन-सूत्र सामने आते हैं—

- 1. इच्छा को पहचानें -** हर इच्छा को तुरंत पूरा करना आवश्यक नहीं है। इच्छा को पहचानना आत्मचेतना का पहला चरण है।
- 2. प्रतिक्रिया से पहले आत्मनिरीक्षण करें -** क्रोध या दुख की स्थिति में स्वयं से पूछना चाहिए कि वास्तविक पीड़ा घटना से है या हमारी अपेक्षा से।
- 3. संबंधों में अधिकार से अधिक समझ विकसित करें -** अनासक्ति का अर्थ प्रेम का अभाव नहीं, बल्कि प्रेम में अत्यधिक स्वामित्व-बोध से मुक्ति है।
- 4. अपनी धारणाओं को अंतिम सत्य न मानें -** विचारों के प्रति सजग रहना मानसिक स्वतंत्रता का आधार है।
- 5. 'मैं' की कठोरता को पहचानें -** जहाँ अहंकार कम होता है, वहाँ संवाद और संबंधों के लिए अधिक स्थान बनता है।

इस प्रकार अष्टावक्र गीता के आठवें प्रकरण का मूल प्रश्न मनुष्य के बाहरी जीवन से अधिक उसके अंतर्मन से जुड़ा हुआ है। इच्छा, शोक, हर्ष, क्रोध, ग्रहण, त्याग और आसक्ति—ये सभी मानवीय व्यवहार के महत्वपूर्ण पक्ष हैं। भगवद्गीता के स्थितप्रज्ञ, पतंजलि योगसूत्र के चित्त-वृत्ति सिद्धांत और कबीर तथा प्रेमचंद जैसे साहित्यकारों की मानवीय दृष्टि के साथ इसे पढ़ने पर अष्टावक्र की विचारधारा का व्यापक मानवीय आयाम सामने आता है। क्षमा शर्मा की रचना के संदर्भ में यह विवेचन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि साहित्य मनुष्य के भीतर चलने वाले द्वंद्व को संवेदनात्मक रूप देता है। अष्टावक्र उस द्वंद्व की दार्शनिक जड़ की ओर संकेत करते हैं। अतः जीवन-बोध का सार केवल संसार का ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि अपने मन की प्रतिक्रियाओं, इच्छाओं, अपेक्षाओं और अहंकार को पहचानना है। अष्टावक्र का संदेश आधुनिक मनुष्य से मानो यह कहता है कि मुक्ति किसी दूरस्थ स्थान की प्राप्ति नहीं, बल्कि अपनी मानसिक आसक्तियों को पहचानने और आत्मस्वरूप में स्थित होने की प्रक्रिया है। “मनुष्य का सबसे बड़ा संघर्ष संसार से नहीं, अपने भीतर निर्मित उस ‘मैं’ से है, जो प्रत्येक अनुभव को अपने पक्ष में या विपक्ष में बाँट देता है।” इसी आत्मचेतना से मानवीय व्यवहार में संतुलन, संबंधों में संवेदनशीलता और जीवन में वास्तविक बोध उत्पन्न हो सकता है।

संदर्भ-ग्रंथ :-

- 1. क्षमा शर्मा की** अष्टावक्र गीता के आठवें प्रकरण में मानवीय संदर्भ ।
- 2. प्राचीन प्रतिनिधी कवि -** हजारी प्रसाददिवेदी, कबीर के निर्गुण दर्शन, आत्मचिंतन और आडंबर-विरोधी दृष्टिकोण ।
- 3. प्रेमचंद – गोदान** , सामाजिक परिस्थितियों और मानवीय आकांक्षाओं का अध्ययन ।
- 4. आधुनिक प्रतिनिधी कवि -** हजारी प्रसाददिवेदी , महादेवी वर्मा अंतर्मन, संवेदना और मानवीय संदर्भ ।